ओजोन परत का बढ़ता खतरा

डा. मधुबाला
रीडर, पत्रकारिता विभाग,
कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरूक्षेत्र (हरियाणा)

पिछले कुछ वर्षो में धरती के वातावरण में अत्यधिक परिवर्तन आया है। यदि प्रदूषण को इस परिवर्तन का कारण माना जाये तो अतिश्योक्ति न होगी। उद्योगीकरण और शहरीकरण के कारण प्रदूषण एक गम्भीर समस्या बनता जा रहा है। इस प्रदूषण के कारण ओजोन क्षरण का खतरा बढ़ता जा रहा है। हमारे सौर मंडल में पृथ्वी एक ऐसा ग्रह है, जो आक्सीजन से घिरा हुआ है, जबकि अन्य ग्रह कार्बन डाइआक्साईड, मीथेन तथा हाइड्रोजन जैसी निष्क्रय गैसों से घिरे हुए हैं। ओजोन हमारी पृथ्वी के वायुमण्डल की उपरी परत (15 से 50 कि.मी. की ऊंचाई) पर स्थित है। ओजोन का सर्वाधिक संकेद्रण धरातल से 20 से 25 कि.मी. की ऊँचाई पर समताप मण्डल में मिलता है। यह ओजोन परत सूर्य से आने वाली पैरा बैंगनी विकिरणों को पृथ्वी तक पहुंचने से रोकता है। इसीलिये ओजोन परत को जैव मण्डल का सुरक्षा कवच भी कहते हैं, क्योंकि ओजोन पौधों एवं जीवों के जैविक सुरक्षा के कवच का कार्य करता है। लेकिन हाल के वर्षो में ओजोन के इस सुरक्षा कवच की मोटाई में 2 प्रतिशत की कमी आई है। यदि यह पैराबैगनी किरणें पृथ्वी तल पर सीधा पहुंचने लगे तो इससे मनुष्यों पर बुरा प्रभाव पड़ेगा। इससे त्वचा का कैंसर, आंखों का मोतिया बिंद, आंखों में सूजन, शारीरिक प्रतिरोधक क्षमता का कम होना, आक्सीजन चक्र में व्यवधान होना आदि कई समस्याएं व रोग उत्पन्न होंगे।

ओजोन परत के ह्रास का मुख्य कारण क्लोरोफ्लोरो कार्बन है। इस रसायन का प्रयोग अक्सर हम अपने दैनिक जीवन में करते हैं। इस रसायन की उपयोगिता ने उद्योगीकरण में भी तहलका मचाया। इस का उपयोग एयर कण्डीशनर, फ्रिज, अग्निशमन सेवा, विमानों के ईधन में, एयरोसोल में तथा इलैक्ट्रिक उद्योगों में सर्किट की सफाई आदि करने में होता है। वर्तमान में इस का उपयोग कम्पयूटर में भी हो रहा है। क्लोरोफ्लोरो कार्बन 15 प्रतिशत ग्रीन हाउस को प्रभावित करता है। क्लोरोफ्लोरो कार्बन में कार्बनडाईआक्साइड की अपेक्षा ग्लोबल वार्मिग को बढ़ाने में 10,000 गुणा क्षमता होती है। क्लोरोफ्लोरो कार्बन के अलावा अन्य रसायन हाइड्रोक्लोरोफ्लोरो कार्बन, कार्बन टेट्रा

क्लोराईड, नाइट्रिक आक्साइड तथा मिथाइल ब्रोमाइड आदि भी इस पर्त को क्षति पहुंचाते हैं। मिथाइल ब्रोमाइड का प्रयोग अनाज को कीड़ो से बचाने के लिये भी किया जाता है। नाइट्रिक आक्साइड भी एक घातक गैस है जो ओजोन अणुओं को आक्सीजन में परिवर्तित कर सकती है। क्लोरोफ्लोरो कार्बन के अणु सूर्य की पैराबैगनी किरणों के साथ क्रिया कर विघटित होकर आक्सीजन व क्लोरीन मोनो आक्साईड में बदल जाते हैं। यह प्रक्रिया जारी रहती है जिसके कारण क्लोरोफ्लोरो कार्बन अणु द्वारा निकली क्लोरीन द्वारा ओजोन के लगभग एक लाख अणु नष्ट हो जाते हैं।

इस प्रलयकारी समस्या का पता कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के प्रो. शेरवुड रॉलैन्ड ने 1973 में लगाया। 1983 और 1984 में अमेरिकी उपग्रह निम्बस ने ओजोन परत का अध्ययन किया। 1987 में शोध द्वारा यह सिद्ध किया गया कि क्लोरीन गैस ओजोन को नष्ट करती है। वैज्ञानिकों ने इस सदर्भ में यह पाया कि क्लोरीन का एक परमाणु एक लाख ओजोन अणुओं को जब्त कर लेता है। 1991 में नासा ने यह पता लगाया कि गत एक दशक में ओजोन परत का 4.5 से 5 प्रतिशत तक ह्रास हुआ है। नासा द्वारा जारी एक चित्र में यह छिद्र एक विशाल नीले रंग के धब्बे के रूप में पूरे अण्टार्कटिका से लेकर अमेरिका के दक्षिणी कोने तक फैला हुआ दिखाई दे रहा है। नासा द्वारा ही वर्ष 2000 में जारी एक रिपोर्ट के अनुसार ओजोन परत में अब तक का सबसे बड़ा छिद्र दिखाया गया है, जो पिछले वर्ष लगभग 2 करोड़ 83 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैल गया है तथा यह अमेरिका के कुल क्षेत्रफल का लगभग तीन गुणा है। नासा के उपग्रह में लगे ओजोन मैचिंग स्पैक्ट्रोमीटर पर काम करने वाले पॉल न्यूमैन का कहना है कि ओजोन परत पर निगाह रखने वालों को बड़े छिद्र की आंशका तो थी लेकिन छिद्र इतना बड़ा हो जायेगा इसकी कल्पना नहीं की थी। पॉल न्यूमैन के अनुसार हाइड्रोक्लोरो कार्बन गैसों के कांरण इस छिद्र के बड़े होने का चरमकाल वर्ष 2010 होगा उसके बाद स्थित सामान्य होने की सम्भावना है।

जहाँ रसायन उपयोग के कारण ओजोन परत को नुकसान पहुंच रहा है, वहां प्राकृतिक कारणों से भी ओजोन परत का ह्रास हो रहा है। प्राकृतिक कारणों में सौर क्रिया, नाइट्रस आक्साइड, प्राकृतिक क्लोरीन, वायुमंडलीय संचरण, पृथ्वी के रचनात्मक प्लेट किनारों से निकलने वाली गैस तथा केन्द्रीय ज्वालामुखी उद्गार से निकलने वाली गैसें प्रमुख है। सौर क्रिया में ओजोन को क्षति पहुंचाने वाली पैराबैंगनी किरणों की मात्रा सौर

स्थिरांक द्वारा प्रभावित होती है। इस कारण सौर स्थिरांक सामान्य से अधिक हो जाता है। एक सौर चक्र में कई सौर क्रियायें होती है, जिसका प्रभाव सौर स्थिरांक पर पड़ता है और ओजोन का विनाश होने लगता है।

इसी प्रकार ओजोन को नष्ट करने वाली नाइट्रस आक्साइड प्राकृतिक गैस से बनती है। वायुमण्डल में विद्यमान नाइट्रोजन सूर्यताप से मिलकर नाइट्रस आक्साईड बनाती है, जिसके द्वारा ओजोन नष्ट होता है। वायुमण्डल में प्राकृतिक क्लोरीन के विसर्जन से भी ओजोन प्रभावित होता है। गैस हाइट्रेट रन्ध्रमय बर्फ की तरह होती है। यह ध्रुवीय भागों में मिलती है, इसका निर्माण भू-उपग्रह आधारित लेजर के प्रयोग द्वारा रोका जा सकता है तथा ओजोन विनाश से बचा जा सकता है।

ओजोन नष्ट होने से उष्मा संतुलन बिगड़ने लगता है और जल चक्र में भी परिवर्तन होता है। एक सम्भावना यह भी व्यक्त की जा रही है कि ग्लाबेल वार्मिंग से समुद्र का स्तर हिम चोटियों के ग्लेशियर के पिघलने से बढ़ेगा। सन् 2030 के अंत तक समुद्र का स्तर 14 से 24 से.मी. बढ़ेगा। छोटे निम्न टापू समुद्र के जलस्तर बढ़ने के कारण प्रभावित होंगे। सेलाइन जल के बढ़ने से अन्य समस्या यह पैदा होगी कि केवल नमक को सहन करने वाली फसलें ही पैदा होंगी और इस जल में कई फैसलें पैदा नहीं हो पायेंगी।

ओजोन विनाश हाइड्रोजन पैराक्साइड में वृद्धि करता है, जिससे अम्लीय वर्षा में वृद्धि होगी। ओजोन ह्रास से वनस्पतियों की उत्पादकता पर भी प्रभाव पड़ेगा।

ओजोन परत को नष्ट करने वाली सभी मानवीय क्रियाओं को नियंत्रित करने के लिए 1983 में वियना कन्वेंशन तथा 1987 में सी.एफ.सी. के उपयोग को आधा करने के लिये कनाडा के मांट्रियल शहर में संयुक्त राष्ट्रीय पर्यावरण कार्यक्रम, जिसे 'मांट्रियल प्रोटोकोल' के नाम से जाना जाता है, पर हस्ताक्षर किये गये। इस मसौदे पर हस्ताक्षर करने वाले देश क्लोरोफ्लोरो कार्बन गैस के उत्पादन एवं उपयोग की मात्रा में 50 प्रतिशत की कमी करने पर सहमत हुए तथा सी.एफ.सी. गैस के विकल्प के रूप में Bio Act EC-7 और HFC 134 A गैस को खोजा गया। 1990 में लन्दन में मांट्रियल प्रोटोकोल में आवश्यक सुधार किये गये।

सी.एफ.सी. के सफाये के लिए विकसित देशों ने मिलकर 240 मिलियन डॉलर का एक कोष बनाया जिससे विकासशील देश सी.एफ.सी. के विकल्पों की नयी प्रौद्योगिकी विकसित कर सकें। 1992 एक बार फिर कई देश कोपेन हेगन में इकट्ठा हुए और समझौते में कई तकनीकी संशोधन किये गये। अब तक 157 देशों ने इस समझौते पर हस्ताक्षर किये हैं। भारत ने भी इस पर 1992 में हस्ताक्षर किये।

1997 में जापान के क्योटो शहर में एक सम्मेलन आयोजित किया गया जिसमें 140 देशों ने भाग लिया। इस सम्मेलन में वैज्ञानिकों ने अपील की कि कार्बन डाइ आक्साईड तथा अन्य जहरीली गैसों की मात्रा को कम किया जाना चाहिए। अन्यथा यह गैसें सूर्य के ताप को अवशोषित कर पृथ्वी के ताप को बढ़ायेंगी। नवम्बर 2000 में नीदरलैंड के हेग शहर में जलवायु परिवर्तन से संबंधित सम्मेलन किया गया। भारत ने ओजोन परत को सुरक्षित रखने के उद्देश्य से ही मान्ट्रियल प्रोटोकॉल पर हस्ताक्षर किये हैं। 1998 में भारत के पर्यावरण एवं वन मंत्रालय ने ओजोन को क्षति पहुंचाने वाले पदार्थो के उत्पादन, व्यापार और आदान प्रदान के लिये मार्ग निर्देशन तय किये हैं। भारत ने इन हानिकारक पदार्थो के स्थान पर एच.एफ.सी. 134 ए. को विकल्प के रूप में विकसित किया है। सी.एफ.सी के कारगर विकल्पों के उत्पादन तथा प्रौद्योगिकी के विकास की जिम्मेदारी भारतीय रासायनिक प्रौद्योगिकी संस्थान, हैदराबाद पर है।

सी.एफ.सी. के विकल्प के रूप में जापान की मित्सुविशी इलैक्ट्रिक व टाहयो सैन्यो कम्पनी ने आइस क्लीनिंग युक्ति निकाली है। अन्य विकल्पों को ढूढ़ने के प्रयास सभी देशों द्वारा किये जा रहे हैं। पृथ्वी सम्मेलन में निश्चित किये गये मानदण्डों में एजेंडा 21 के अध्याय -9 के अन्तर्गत वायुमण्डल की सुरक्षा तथा स्ट्रेटोस्फीयर की ओजोन परत की सुरक्षा के उपाय किये जाने लगे हैं। विश्व स्तर पर ओजोन परत को बचाने के प्रयास जारी हैं। ओजोन परत के अनुरक्षण के लिये विश्वव्यापी जन जागरूकता तथा विनाशकारी गैसों के विकल्प के विकास की आवश्यकता है। विकसित और विकासशील देशों में भी परस्पर सहयोग की भावना की आवश्यकता है।

* * *